RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

अनुसूचित जातियों का राजनीति पर प्रभाव

डॉ0 विकास कुमार

इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

नब्बे के दशक तक भारत में दलितों की स्थिति में महत्त्वपूर्ण सुधार आ चुके थे। उनके सामाजिक और राजनीतिक जीवन में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुये। अब पहले की अछूत कही जाने वाली जातियाँ, दलित के नाम से जानी जाने लगी थीं। इसका नेतृत्व बहुजन समाज पार्टी के द्वारा किया गया, जिसकी स्थापना एक बहुत ही काबिल राजनीतिक उद्यमी के द्वारा की गई थी।

1956 में डॉ. बी.आर. अंबेडकर की मृत्यु के बाद अछूत कही जाने वाली जातियाँ के सबसे महत्वपूर्ण नेता जगजीवन राम थे। वह कांग्रेस पार्टी में थे और इस वजह से दलित जातियां एक लंबे अरसे तक कांग्रेस का वोट बैंक बनी रहीं। हां, इस दावे को सिर्फ महाराष्ट्र में चुनौती दी गई, जहां अंबेडकर द्वारा स्थापित रिपब्लिकन पार्टी ने दलित वोट पर अपना हक जताया। इसके अलावा दूसरी पार्टी जो इस पर दावा कर रही थी वो थी अछूत जातियां अपने आपको, अनुसूचित जाति या गांधीजी द्वारा दिए गए शब्द हरिजन की जगह, दलित कहने लगीं। दलित का मतलब होता है वो व्यक्ति या समूह जिसका उत्पीड़न किया गया हो। लेकिन फिर भी पचास के दशक से लेकर अस्सी दशक तक वे ज्यादातर कांग्रेस को ही वोट करते रहे।

दशकों तक जगजीवन राम दबी–कुचली जातियों का झंडा बुलंद करते रहे थे और उनके हित में आवाज उठाते रहे थे। एक श्रद्धांजलिकर्ता ने कहा कि '1988 में उनकी मृत्यु के बाद दलित राजनीति में एक खालीपन आ गया, जिसे भरना लगभग असंभव हो गया। बिखरे हुए, असंगठित, नेतृत्वविहीन और सताए हुए 15 फीसदी अनुसूचित जातियों का भाग्य अनिश्चितता में झूल रहा था।'

जब ये घटना हुई उस समय तक कांशीराम (दोनों में कोई संबंध नहीं था) की राजनीतिक सक्रियता एक दशक पार कर चुकी थी। कांशीराम का जन्म सन् 1932 में पंजाब में हुआ था। यूनीवर्सिटी की पढ़ाई पूरी करने के बाद वे सरकारी सेवा में शामिल हो गए। वे महाराष्ट्र में एक सरकारी प्रयोगशाला में काम करते थे, जहां उनका साक्षात्कार अंबेडकर साहित्य से हुआ। उससे वे बहुत प्रभावित हुए और 1971 में अपनी नौकरी छोड़कर उन्होंने एक संगठन की स्थापना की जिसका लक्ष्य दलित–वंचित पृष्ठभूमि के सरकारी सेवकों की नुमांइदगी करना था। इसे ऑल इंडिया बैकवर्ड एंड माइनोरिटी कम्युनिटीज एम्पलाई फेडरेशन (बामसेफ) कहा गया। अगले एक दशक तक कांशीराम देशव्यापी दौरा करके इस संगठन की राज्य और जिला शाखाओं का गठन करते रहे। अस्सी के दशक की शुरूआत तक बामसेफ के सदस्यों की संख्या दो लाख तक पहुंच गई थी, जिसमें से ज्यादातर ग्रेजुएट या पोस्टग्रेजुएट थे। यह एक तरह से दलित संभ्रात वर्ग का ट्रेड यूनियन था, जो उनके नेता के शब्दों में पूरे वंचित समुदाय के लिए 'थिंक टैंक', 'प्रतिभा बैंक' और 'आर्थिक बैंक' का निर्माण करता था।

बामसेफ के विकास का इलाका उत्तर भारत और खासतौर पर उत्तर प्रदेश था, जहां इसकी सभाओं में अक्सर एक लाख या इससे भी ज्यादा लोग उमड़ते थे। इस संगठन की कामयाबी ने कांशीराम को एक राजनीतिक दल का गठन करने के लिए प्रोत्साहित किया। इसके लिए कई नाम सुझाए गए, लेकिन आखिरकार इसका नाम बहुजन समाज पार्टी (बसपा) रखा गया। बहुजन शब्द कई मायनों में, दलित से भी ज्यादा वंचित समुदाय की नुमाइंदगी करता था। जहां दलित सिर्फ अनुसूचित जाति या पूर्व के अछूतों को ही इंगित करता था, वहीं बहुजन शब्द पिछड़ी जातियों और मुसलमानों का भी प्रतिनिधित्व करता था।

देश में दलितों–वंचितों के लिए चार दशकों से चलाए जा रहे सकारात्मक उपायों से दलितों में एक मजबूत और आक्रामक मध्यवर्ग का उदय हो चुका था। शुरू–शुरू में दलितों को सिर्फ राजकीय प्रशासन के निचले पदों पर ही नियुक्त किया जाता था, जहां अमूमन शारीरिक श्रम का काम होता था। लेकिन वक्त बीतने के साथ–साथ अब ऊंचे पदों पर भी मसलन मजिस्ट्रेट और सचिवालयों में क्लास वन अधिकारियों के तौर पर भी उनकी नियुक्ति होने लगी थी।

एक अदद सरकारी नौकरी किसी आम आदमी को आर्थिक निश्चिंतता और सामाजिक प्रतिष्ठा देती है। साल 1995 तक इस तरह सरकारी नौकरियों से फायदा पाने वाले दलितों की संख्या करीब 20 लाख तक पहुंच गई थी। हालांकि ये सच था कि उस वर्ग से आने वाले ज्यादातर लोग अभी भी भयंकर बदहाली का जीवन जी रहे थे। वे अभी भी कृषि मजदूर, मेहतर और भवन निर्माण के कार्यों में श्रमिक का काम करके सामाजिक रूप से हीन जिंदगी जी रहे थे। फिर भी अब उनके बीच एक अपेक्षाकृत

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved ISSN: 2349-7637 (Online)

प्रभावशाली मध्यवर्ग पनप चुका था जो उनके मुद्दों को आगे ले जाता। यही वो वर्ग था जो बामसेफ का सदस्य बना और जिसने बाद में कांशीराम की बहुजन समाज पार्टी में अहम भूमिका निभाई।

सन् 1984 के आम चुनावों में बसपा ने राजनीति के मैदान में पहली बार कदम रखा। हालांकि उस चुनाव में उसे दस लाख से ज्यादा वोट मिले, लेकिन वह एक भी सीट नहीं जीत पाई। हालांकि आने वाले चुनावों में वह काफी कामयाब हुई। इसने 1996 के चुनावों में 11 सीटें और 1999 चुनावों में 14 सीटों पर जीत दर्ज की। लेकिन जिस जगह उसने वाकई उल्लेखनीय कामयाबी हासिल की वो था उत्तर प्रदेश विधानसभा का चुनाव। यहां पार्टी कार्यकर्ताओं ने कामयाबीपूर्वक दलित जनता को अपने पाले में खींचा और उन्हें चेतावनी दी कि कांग्रेस सिर्फ उनके समाज से चमचों को भर्ती करना चाहती है। दूसरी तरफ बसपा ने कहा कि उनकी पार्टी 'सामाजिक न्याय' या यहां तक कि 'सामाजिक बदलाव' के लिए लड़ रही है। सिर्फ उनकी अपनी पार्टी ही दलितों में सम्मान, गरिमा और समृद्धि ला सकती है।

यह संदेश दलित वकीलों, शिक्षकों और अधिकारियों द्वारा उनके वंचित भाई–बहनों तक पहुंचाया गया। बैठकों और जनसभाओं के अलावा इन बुद्धिजीवियों ने उन निचली जातियों तक कई लोकगीतों और लोककथाओं की श्रृंखला का प्रकाशन किया जो उनके गौरवशाली अतीत के बारे में बताते थे। ये बातें इस विश्वास के साथ लोगों के सामने पेश की जाती थी कि 'अभी तक भारत का इतिहास ज्यादातर ब्राह्मणों के द्वारा ही लिखा गया है।' अब एक समानांतर इतिहास गढ़ा जाने लगा जिसके मुताबिक ये दावा किया गया कि वास्तव में दलितों ने ही 'हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसी महान सभ्यताओं का निर्माण किया था।' इतिहास के पूरे दौर में इस अत्याचार का दलित कार्यकर्ताओं, किसानों, गायकों और कवियों द्वारा कड़ा प्रतिरोध किया गया। दलितों की इन वास्तविक और काल्पनिक कहानियां को छोटी–छोटी पुस्तिकाओं में छापकर सैकड़ों–हजारों की तादाद में नब्बे दशक में पूरे यू.पी. में बांटा गया।

राजनीतिक संगठन और सामाजिक चेतना के साथ–साथ विकसित होने की घटना ने बसपा को इस मुकाम पर ला खड़ा किया कि वह उत्तर प्रदेश में तेजी से आगे बढ़ सके। 1989 से 2002 के बीच में राज्य में पांच विधानसभा चुनाव हुए। इन चुनावों में बसपा द्वारा सीटों की संख्या क्रमशः 13, 12, 69, 67 और 98 रही। सबसे आखरी चुनाव में इसने कुल मतों का 20 फीसदी प्राप्त कर लिया। बसपा की उपलब्धियां ज्यादातर कांग्रेस की कीमत पर हुईं। दलितों के समर्थन से सामने आई यह पार्टी यू.पी. की तीन अहम बड़ी पार्टियों में से एक हो गई। दूसरी पार्टी मुलायम सिंह यादव की समाजवादी पार्टी और हिंदू विचारों वाली भाजपा थी।

इस समय तक उस पार्टी में एक नये नेता का उदय हो चुका था, जिसने कभी कांशीराम के संरक्षण में काम किया था। अब यह नया नेता कांशीराम की बड़ी जिम्मेदारी को संभालने के लिए तैयार हो चुका था। उसका नाम मायावती था। मायावती का जन्म 1956 में दिल्ली में हुआ था। उनके पिता सरकारी विभाग में एक क्लर्क थे। मायावती की इच्छा थी कि वे समाज में प्रतिष्ठा दिलाने वाली भारतीय प्रशासनिक सेवा में शामिल हों, लेकिन बामसेफ की एक सभा में कांशीराम से उनकी मुलाकात ने उन्हें राजनीति में ला दिया। भाषण देने की लाजवाब कला और चुटीले व्यंग्यों की बदौलत मायावती ने जनसभाओं में लोगों का ध्यान आकर्षित किया। उनका व्यंग्य ज्यादातर कांग्रेस पार्टी के खिलाफ होता था। फिर तो उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। नब्बे के दशक की शुरूआत ते मायावती अपनी पार्टी का चेहरा बन चुकी थीं। उन्हें इस बात का अहसास हो गया कि सिर्फ अपने समुदाय के मतों की बदौलत दलित कभी भी सत्ता में नहीं आ पाएंगे। इसलिए उन्होंने दूसरी पार्टियों और जातियों से गठबंधन बनाना शुरू किया। वह कम अंतरालों के लिए तीन बार उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं और गठबंधन सरकारों का नेतृत्व किया। ये गठबंधन सरकारें कभी समाजवादी पार्टी के साथ तो कभी बीजेपी के सहयोग से बनाई गईं।

भारत से गहरा संबंध रखने वाले पत्रकार, पुराने जानकार जेम्स केमरून ने सन् 70 के दशक में लिखते हुए कहा था कि भारत के सार्वजनिक जीवन में जितनी भी अहम महिलाएं हैं वो अंग्रेजी भाषी उच्चवर्ग से ताल्लुक रखती हैं। केमरून ने टिप्पणी की कि 'अभी और इससे पहले भी राजनीति में ऐसी कोई महिला सामने नहीं आई जो श्रमिक वर्ग से ताल्लुक रखती हो।' केमरून ने आगे कहा कि यह कहना बिल्कुल कठिन है कि ऐसा दिन कब आएगा। लेकिन दो दशकों के भीतर ही केमरून को उनका जवाब मिल गया, या यूं कहा जाए कि उनकी बात गलत साबित हो गई। आखिरकार, वो दिन आ ही गया जब एक दलित के घर में पैदा हुई महिला हिंदुस्तान के सबसे ज्यादा आबादी वाले सूबे की मुख्यमंत्री बन गई।

देश के दूसरे हिस्सों में भी दलितों की आवाजें सुनी जा रही थीं। समाजशास्त्री आंद्रे बेटले ने लिखा कि समकालीन भारत में अनुसूचित जातियों में जो सबसे अहम विशेषताएं देखी जा रही हैं वो ये कि वे 'हरेक क्षेत्र में देखे जा रहे हैं। हालांकि अभी भी उनका शोषण होता है, उन्हें दबाया जाता है और उन्हें कलंकित माना जाता है, लेकिन भारतीय समाज में अब उनकी मौजूदगी को अनदेखा नहीं किया जा सकता।'

एक जमाने में हरेक अन्याय के सामने सिर झुका लेने वाले और दबा दिए जाने वाले दलित, भारतीय संविधान के तहत दिए गए अपने अधिकारों के बारे में जागरूक हो चुके थे और इसके लिए लड़ने को तैयार हो गए थे। वास्तव में, भीमराव अंबेडकर, जिन्होंने इस संविधान के निर्माण में अग्रणी भूमिका निभाई थी, अब हरेक जगह दलित प्रेरणा के प्रतीक बन चुके थे।

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)

एक मानवविज्ञान शास्त्री ने लिखा कि 'पूरे तमिलनाडू में अंबेडकर की मूर्तियां, तस्वीरें, पर्चे और नामों की तख्तियां हर जगह दिखाई देती हैं। बहुत सारे सभागृहों, स्कूलों और कॉलेजों का नामकरण उनके नाम पर कर दिया गया और यहां तक कि उनके वैचारिक विरोधी भी उनको नए दृष्टिकोण से दिखाने का प्रयास करते और उनकी विरासत पर दावा कर अपने आपको धन्य समझते।' देश के दूसरे सूबों में भी ऐसा ही हो रहा था। जहां कहीं भी दलित रहते थे या काम करते थे, अंबेडकर की तस्वीर वहां जरूर होती। वो तस्वीर आखिरकार फ्रेम करवाई जाती, उस पर फूलों की माला चढ़ाई जाती और उसे टोलों में, घरों में, दुकानों में और कार्यालयों में मुख्य जगहों पर रखा जाता। इस बीच दलित समूहों के दबाव की वजह से कस्बों और शहरों में अंबेडकर की मूर्तियां सार्वजनिक जगहों पर लगाई जाने लगीं। शहर के मुख्य चौराहों, रेलवे स्टेशनों के सामने और बगीचों में अंबेडकर की मूर्तियां लगाई जाने लगीं। अंबेडकर को गर्व और स्वाभिमान से खड़े एक नेता के रूप में तनकर खड़ा दिखाया जाता, जिनके हाथ में उनके द्वारा लिखी गई संविधान की पुस्तक होती।

अपने मृत्यु के पचास साल बाद अंबेडकर की पूजा हिंदुस्तान के ऐसे इलाकों में भी की जाने लगी, जिस जगह का अपने जीवनकाल में वे कभी दौरा भी नहीं कर पाए थे। अपने जीवनकाल में उन इलाकों में अंबेडकर को कोई नहीं जानता था। देश के लगभग हरेक जिलों में जहाँ कहीं भी दलित हैं अंबेडकर को बहुत श्रद्धा और प्यार से याद किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. स्वर्ग पर धावा : बिहार में दलित आन्दोलन, ले.–प्रसन्न कुमार चौधरी और श्रीकान्त।
2. लोकायत और लोकदेवता : डॉ. रामप्रवेश सिंह, सुरेखा प्रकाशन, मुजफ्फरपुर।
3. भारत में जाति भेद : आचार्य क्षितिमोहन सेन, साहित्य भवन, प्रा. लि, इलाहाबाद।
4. संस्कृति संगम : आचार्य क्षितिमोहन सेन, साहित्य भवन, प्रा. लि., इलाहाबाद।
5. प्रेमचन्द : सामन्त का मुंशी : डॉ. धर्मवीर, वाणी प्रकाशन।
6. कबीर के आलोचक : डॉ. धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।
7. हरिजन से दलित : राजकिशोर, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।
8. मराठी दलित कविता और साठोत्तरी हिन्दी कवितार में सामाजिक और राजनीतिक चेतना : विमल थोरात, हिन्दी बुक सेंटर दिल्ली।
9. दलित दस्तावेज, ले.–एम. आर. विद्रोही।

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)